प्याज के आंसू

दुनिया भर में अनेक ऐसे अंधविश्वास फैले हुए हैं जिन्हें आम आदमी सत्य मानता है। भारत में ऐसे अंधविश्वास बहुत ज्यादा फैलाये गये हैं। ऐसे अंधविश्वासों में अनेक सामाजिक, धार्मिक अंधविश्वास हैं तो अनेक राजनैतिक। राजनैतिक अंधविश्वासों में भी एक दो नहीं दर्जनों प्रकार के अंधविश्वास हैं। ये सभी अंधविश्वास राजनैतिक कारणों से फैलाये जाते हैं तथा जब वे अंधविश्वास सत्य के समान स्थापित हो जाते हैं तब ऐसे स्थापित असत्यों से पिण्ड़ छुडाना बहुत कठिन होता है। हम देख चुके हैं कि स्वतंत्रता के तत्काल बाद कांग्रेस पार्टी ने जिस तरह सत्ता की लालच में अल्पसंख्यक शब्द को स्थापित किया, उस शब्द से पिण्ड़ छुडाने में भारत की जनता को सरसठ वर्ष लग गये और अब भी निश्चित नहीं दिखता कि पिण्ड छूट हीं गया है क्योंकि अब भी कांग्रेस सहित राजनैतिक दल उलझन में फंसे हैं कि वे अब भी अल्पसंख्यक केंद्रित मतों की राजनीति पुनः आगे बढाने की प्रतीक्षा करें अथवा धर्मनिरपेक्षता का सही मार्ग चुनें। एन्टोनी कमेटी की रिपोर्ट एक अलग सत्य को रेखांकित करती हैं तो महाराष्ट्र में मुस्लिम आरक्षण एक अलग दिशा को।

यद्यपि ऐसे अनेक राजनैतिक असत्य समाज में सत्य के समान स्थापित हैं किंतु उनमें भी मंहगाई शब्द का व्यापक असर देखने को मिल रहा है। राजनीति समाज को व्यक्तियों का समूह न मानकार वर्गों का संघ मानकर चलती है। यह मान्यता उसे हमेशा हीं लाभदायक दिखती है। इन वर्गों के निर्माण में वैसे तो अनेक कारक शामिल हैं किंतु भारत का राजनेता आठ आधारों पर हीं वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष तक ले जाने में ज्यादा प्रयत्नशील रहता है। वे आठ आधार हैंः 1.धर्म 2. जाति 3. भाषा 4. क्षेत्रीयता 5. उम्र 6. लिंग 7. गरीब–अमीर 8. उत्पादक उपभोक्ता। सन् सैंतालीस से लेकर आज तक सभी राजनैतिक दल लगातार आठों आधारों पर वर्ग विद्वेष वर्ग संघर्ष के लिए सक्रिय रहते हैं। एक भी राजनैतिक दल ऐसा नहीं है जो इनमें से किसी एक भी आधार को छोड़कर चले। समय– समय पर राजनैतिक दल आठ आधारों में से किसी एक को आगे बढाते हैं तथा कुछ महीनों बाद किसी अन्य आधार को आगे बढ़ाकर किसी अन्य आधार को शिथिल कर देते हैं। सभी राजनैतिक दल समय– समय पर आठों आधारों को जिन्दा भी रखते हैं और चुनाव के समय उन सबका ट्रायल भी करते हैं और उसमें से जो मुद्दा आगे आ जाये वही पर्याप्त होता है। वर्ष 2014 के चुनाव में भी मंहगाई, धर्म, अमीर– गरीब, महिला सशक्तिकरण, युवा शक्ति जागरण, भ्रष्टाचार जैसे मुद्दों का ट्रायल हुआ, उनमें से धर्म का मुद्दा आगे आया तो वही परिणाम दे गया। सरकार बनते हीं भाषा का मुद्दा सामनें लाने की कोशिश हुई जो ज्यादा नहीं बढा तब आठवां आधार उत्पादक–उपभोक्ता को मंहगाई के नाम पर आगे बढ़ाने का प्रयत्न हो रहा है।

मंहगाई लगातार घट रही है यह बात भारत का हर आदमी जानता है किंतु सब कुछ जानते हुए भी भारत का हर आदमी मानता है कि मंहगाई लगातार सरसठ वर्षों से बढ़ रही है। मंहगाई घट रही है इसका स्पष्ट प्रमाण है कि प्रत्येक व्यक्ति का लगातार जीवन सुधर रहा है। गरीब से गरीब का भी और भीख मांग कर जीने वाले का भी। पचास वर्ष पूर्व खेत में काम करने वाले मजदूर को दिन भर की मजदूरी के बदले जितना अनाज मिलता था, आज उसकी अपेक्षा छः से दस गुना अधिक मिल रहा है। स्पष्ट है कि गेंहूं अपेक्षाकृत सस्ता हुआ है और श्रम मूल्य बढा है। फिर भी हर व्यक्ति मंहगाई से इसलिये दुखी है क्योंकि उसके मार्गदर्शक नेता, सामाजिक ठेकेदार, साहित्यकार,

धर्म गुरू, टी.व्ही. चैनल, सरकारी कर्मचारी, अपने अपने अलग–अलग कारणों से मंहगाई का होना स्वीकार कर रहें हैं। यदि भूल–चूक से कोई नेता कभी सच बात बोलना भी चाहे तो वह सब समझते हुए भी झूठ बोलने को बाध्य हो जाता है क्योंकि वह उस सच के कारण अपना स्वार्थ प्रभावित होते हुए देखता है। हर राजनेता पिछले कई वर्षों से मंहगाई के असत्य का प्रभाव देख चुके हैं। यहां तक कि केवल प्याज या टमाटर का हल्ला केंद्र सरकार तक को बदलने की ताकत रखता है। यदि उसे योजनापूर्वक चला दिया जाये।

ऐसे हीं प्रयोग के अंतर्गत पिछले कुछ दिनों से विपक्षी राजनेताओं तथा मीडिया चैनलों ने प्याज की मूल्य वृद्धि को हथियार के रूप में उपयोग करना शुरू किया है। प्याज के आंसू, प्याज से आंसू जैसे शीर्षक उछाले जा रहे हैं। सम्पन्न घरों की महिलाओं के इन्टरव्यू प्रसारित होने शुरू हो गये हैं। सरकार भी जानती है कि न मंहगाई का कोई अस्तित्व है न कोई प्रभाव। किंतु चुनाव पूर्व सरकार ने इस मंहगाई का जो नाटक किया था अब उसे नाटक सिद्ध करना सरकार के लिए संभव नहीं। इसलिए सरकार सरकारी अफसरों के साथ मिलकर मंहगाई के हल्ले को दबाने का मार्ग पूछती है और अफसर बताते हैं कि सबसे अधिक कारगर समाधान होता है कि जमाखोरी, कालाबाजारी कहकर व्यापारियों पर सारा दोष डाल देना। अफसर भी जानतें हैं कि किसी वस्तु की मूल्य वृद्धि का कारण क्या है। किंतु वे वास्तविक कारण न बताना चाहते हैं न पूछने वाला सुनना चाहता है। इसलिए विपक्ष और मीडिया द्वारा मंहगाई का हल्ला उठाते हीं अफसर और नेता व्यापारी को जमाखोर कहने का नाटक करके नाटक का उत्तर दे देता है। साठ वर्षों से यही होता आ रहा है और आगे भी होता रहेगा। न कभी मंहगाई का समाधान निकला, न जमाखोरी, कालाबाजारी जैसे कारणों से हटकर कोई अन्य कारण खोजा गया। क्योंकि विपक्षी दल और सरकार दोनों जानते हैं कि मंहगाई का हल्ला भी एक नाटक है और रोकने का प्रयास भी एक नाटक है। नाटक के माध्यम से जो भावनाऐं उभारी जाती हैं उनका तत्कालीन समाधान किसी अन्य नाटक द्वारा भावनाओं का परिवर्तन हीं संभव होता है।

प्रश्न यह उठता है कि एकाएक किसी वस्तु की मूल्य वृद्धि में जमाखोरी का प्रभाव पडता है या नहीं। सच यह है कि मूल्य वृद्धि का प्रभाव दो कारणों से संभव है। पहला सभी वस्तुओं की मूल्य वृद्धि का औसत निकालकर जो मंहगाई घोषित होती है वह रूपये का अवमूल्यन होता है उसे मुद्रा स्फीति कहते हैं। इस तरह कुछ वस्तुऐं सस्ती होती हैं तथा कुछ मंहगी। सबका औसत निकालकर मुद्रास्फीति घोषित किया जाता है। ऐसे औसत की अपेक्षा यदि कोई वस्तु मंहगी बिकती है तो उस वस्तु को मंहगाई के साथ जोडा जाता है। ऐसी वस्तु के मंहगी होने में भी दो कारण संभव हैं 1. उत्पादन में कमी 2. स्टॉफ की अधिकता। स्टॉफ की अधिकता दो इकाईयां करती हैं 1. सरकार 2. व्यापारी। इनमें भी सरकार द्वारा किया गया स्टॉक जमाखोरी होता है क्योंकि वह स्टॉक प्रायः विदेशी मुद्रा की लालच में देश से बाहर भेज दिया जाता है। जबकि व्यापारियों द्वारा किया गया स्टॉक उक्त वस्तु के उपभोग का समय आने के बाद बाजार में आता रहता है। वास्तविकता यह है कि यदि व्यापारी उत्पादन सीजन में ज्यादा स्टॉक करते हैं तो उत्पादन और उपभोक्ता में रेट का संतुलन बना रहता है। क्योंकि वैसा स्थिति में किसान की फसल में मूल्य बहुत ज्यादा नहीं घट पाते तथा बाद में उपभोक्ता मूल्य भी इसलिए नहीं घट पाता क्योंकि व्यापारी को नई फसल आने के पूर्व माल बेचना पडता है। यह बात अवश्य है कि व्यापारी कब कितना खरीदना और कितना रखना और बेचना की बहुत जानकारी रखने के कारण प्रायः लाभ में रहते हैं। जबकि सरकार अनाडी होने के कारण या तो वस्तु को सडा

देती है या अधिक निर्यात कर देती है। किंतु वस्तु सड़ भी जाये तो भी सरकार का कुछ नहीं बिगडता और कमी हो जाये तो बाजार को दोष देकर अपना पलडा झाड लेता है। इसलिए सरकार पूरी तरह से बाजार को समाप्त भी नहीं करती और पूरी तरह बाजार को स्वतंत्र भी नहीं करती। यदि सरकार सारा बाजार अपने हांथ में कर ले तो कमी के समय वह बाजार पर दोष नहीं डाल सकती और यदि व्यापारियों को खुली छूट दे दे तो संभव है कि व्यापारी किसानों का माल कम भाव में बिकने हीं न दें। यदि फसल में भाव कम नहीं होगे तो सरकार को विदेशी नियति से लाभ कम हो जायेंगा। इसलिये सरकार हमेशा फसल के समय आमतौर पर व्यापारियों पर कठोरता से स्टॉक सीमा लागू करती रहती है। यहां तक कि फसल उत्पादन के समय उत्पादन को प्रदेश से बाहर या जिले से बाहर जाना भी रोक देती है। इन सबका मुख्य एक हीं उद्देश्य होता है कि उत्पादन के समय वस्तु के मूल्य कम से कम हों तथा सरकार को फायदा हो।

उत्पादन मूल्य और उपभौक्ता मूल्य बीच जो अंतर होता है वह अंतर व्यापारी का लाभ होता है। यदि अकस्मात् होने वाली हानि को छोड दे ंतो आम तौर पर व्यापारी लाभ में रहता है जबकि बिल्कुल समान स्थिति में स्टॉक करके घाटे में रहती है। क्योकि सरकार के पास अनुभव की कमी है तथा उसका लाभ–हानि सार्वजनिक होने से व्यवस्था खर्च व्यापारी की अपेक्षा कई गुना ज्यादा होता है। साथ हीं सरकारी माल सड़ता या बर्बाद भी बहुत ज्यादा होता है। सब बातों को ठीक–ठीक जानते समझते हुए भी सरकार उत्पादक–उपभोक्ता के बीच से स्वयं को बाहर निकालकर व्यवस्था बाजार के भरोसे इसलिये नहीं छोड सकती कि सरकारी व्यवस्था पर जिन्दा बिचौलिये, मीडिया कर्मी, कर्मचारी, नेता आदि की रोजी–रोटी का साधन बिगड जायेगा। साथ हीं हमेशा कोई भी सरकार व्यापारी को खलनायक के रूप में प्रस्तुत करके अपनी सुरक्षा करती रहती है। स्वयं को बाहर कर देने से बडी मात्रा में बिचौलिये सरकार पर हीं टूट पडेगे। ऐसी स्थिति कोई भी सरकार झेलने से डरती है और यही कारण है कि उसे मंहगाई पर कभी भी साफ–साफ न बोलकर नाटक करना पड़ता है।

क्या पूरी व्यवस्था से सरकार का निकलना आदर्श स्थिति में है। मेरे विचार से एक बीच का मार्ग संभव है। जिससे उत्पादक उपभोक्ता के बीच का फर्क भी नियंत्रित रहेगा तथा सरकार को कुछ करना भी नहीं होगा। सरकार फसल के न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्य तय कर दे। यदि बाजार मूल्य न्यूनतम से भी नीचे जाते हैं तो सरकार खरीद करे या व्यापारी को खरीद सब्सीडी देकर बाजार में निश्चित मूल्य से कम न होने दे। यदि मूल्य ज्यादा कम होते हैं तो सरकार वस्तु को खरीदकर निर्यात् कर दे। यदि कभी अधिकतम मूल्य पर वस्तु उपलब्ध न हो तो सरकार अपनी खरीदी हुई वस्तु बेचकर मूल्य न बढ़ने दे। किंतु खरीद मूल्य और विक्रय मूल्य में इतना अंतर अवश्य हो कि सरकार को बारबार दखल देने की जरूरत न पडे। इस तरह का कोई संशोधित तरीका निकाला जा सकता है जिसमें सरकार बाहर भी निकल जाये और खतरा भी न रहे।

ये सभी मार्ग तब हीं सफल हो सकते हैं जब सरकार मंहगाई शब्द से चुनावी लाभ उठाने की मंशा छोड दे तथा साथ हीं बिचौलिये के रूप में विदेशी मुद्रा कमाने की ईच्छा भी पारदर्शी होने दे। यदि ऐसा नहीं होता है तो प्याज हीं नहीं, अनेक वस्तुऐं कभी किसानों के आंसू निकालती रहेंगी तो कभी उपभोक्ताओं के आंसू निकलते रहेंगे। भावनात्मक मंहगाई अपना नाटक दिखाती रहेगी।

1. पुण्य प्रसून बाजपेयी

जनसत्ता 28 जून 2014: बात गरीबी की हो लेकिन नई नीतियाँ रईसों को उडान देने वाली हों। बात गांव की हो, लेकिन नीतियां शहरों को बनाने की हों। तो फिर रास्ता भटकाव वाला नहीं, झूठ वाला लगता है। ठीक वैसे हीं जैसे नेहरू ने रोटी–कपडा–मकान की बात की। इंदिरा गांधी ने गरीबी हटाओं का नारा दिया। अब नरेंद्र मोदी गरीबों के सपने को पूरा करने के सपने दिखा रहे हैं। असल में देश के विकास का रास्ता कौन सा सही है इसके मर्म को न नेहरू ने पकडा और न हीं मोदी पकड पा रहे हैं। रेलगाडी का सफर मंहगा हुआ। तेल का मंहगा होना तय है। लोहा और सीमेंट मंहगा हो चला है। सब्जी और फल की कीमतें बढ़ेंगी हीं और इन सबके बीच मानसून ने चौंथी बार धोखा दे दिया तो खुदकुशी करते किसानों की तादाद आगे निकल कर गांव और शहरों दोनों को अपनी गिरफ्त में ले लेगी। तो फिर बदलाव आया कैसा?

यकीनन जनादेश बदलाव लेकर आया है। लेकिन इस बदलाव को दो अलग– अलग दायरों में देखना जरूरी है। पहला मनमोहन सिंह के काल का खात्मा, और दूसरा, आजादी के बाद देश को जिस रास्ते पर चलना चाहिए था उसे वह सही रास्ता न दिखा पाने का पाप। नरेंद्र मोदी ने मनमोहन से मुक्ति दिलाई यह जरूरी था। इसे बडा बदलाव कह सकते हैं, क्योंकि मनमोहन सिंह हीं पहले प्रधानमंत्री थे, जो भारत के प्रधानमंत्री होकर भी दुनिया की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के नुमाईंदे के तौर पर सात रेसकोर्स में थेः मनमोहन सिंह ऐसे पहले पधानमंत्री बने जिन्हें विश्व बैंक से प्रधानमंत्री रहते हुए पेंशन मिलती रही।

यानी प्रधानमंत्री रहते प्रतीक राशि के तौर पर देश से सिर्फ एक रूपया लेकर ईमानदार प्रधानमंत्री होने का तमगा लगाना हो या फिर परमाणु संधि के जरिये दुनिया की तमाम बहुराष्ट्रीय कंपनियों को मुनाफा बनाने देने के लिए भारत को उर्जा शक्ति बनाने का ढोंग हो। हर हाल में मनमोहन सिंह देश की नुमाईंदगी नहीं कर रहे थे, बल्कि विश्व बाजार में बिचौलिये की भूमिका निभा रहे थे। जाहिर है नरेंद्र मोदी बदलाव के प्रतीक हैं जो मनमोहन सिंह नहीं हो सकते। लेकिन यहां से शुरू होता है दूसरा सवाल, जों आजादी के बाद नेहरू काल से लेकर अभी शुरू हुए मोदी युग से जुडा रहा। नेहरू और मोदी के बीच फर्क सिर्फ इतना दिखाई दे रहा है कि भारत की गरीबी को ध्यान में रखकर नेहरू ने समाजवाद का छौंक लगाया था और मोदी के रास्ते में उस आरएसएस को छौंक है जो भारत को अमेरिका बनाने के खिलाफ है।

लेकिन बाकी सब? दरअसल नेहरू यूरोपीय मॉडल से खासे प्रभावित थे। तो उन्होनें जिस मॉडल को अपनाया उसमें हर चीज बडी बननी हीं थी। बडे बांध। बडे अस्पताल। बडे शिक्षण संस्थान। यानि सब कुछ बडा। चाहे भाखडा नागल हो या एम्स या आईआईटी, और जब बडा चाहिए तो दुनिया के बाजार से इन बडी चीजों को पूरा करने के लिए बडी मशीनें, बडी टेक्नोलॉजी, बडी शिक्षा भी चाहिए। तो असल में नेहरू के समय से ही एक भारत में दो भारत बनने का दौर शुरू हो चुका था।।

इसलिये गरीबी या गरीबों को लेकर सियासी नारे भी आजादी के बाद से तुरंत हीं गूंजते रहे और सोलहवीं लोकसभा में भी गूंज रहे हैं। लेकिन अब सवाल है कि मोदी जिस रास्ते पर चल पडे हैं वह बदलाव कहां है?

जनादेश ने कांग्रेस को बदलकर अपनी तरफ से बदलाव किया है लेकिन क्या जनादेश के बदलाव से देश का रास्ता भी बदलेगा या वास्तव में बदलाव आयेगा?

इस सवाल का जवाब मुश्किल नहीं है, क्योंकि नेहरू ने जो गलती की, उसे अत्याधुनिक तरीके से मोदी मॉडल अपना रहा है। सौ आधुनिकतम शहर। आईआईटी। आईआईएम। एम्स अस्पताल। बडे बांध। विदेशी निवेश। यानी हर गांव को शहर बनाते हुए शहरों को चकाचौंध से जोडने का सपना जो आजादी के बाद से बहुसंख्यक तबका अपने भीतर संजाये रहा है। जहां वह घर से निकले, गांव की पगडंडियों को छोडे। शहर आये, वहीं पढे। राजधानी पहुंचे तो वहां नौकरी करे। फिर देश के महानगरों में कदम रखे। फिर दिल्ली या मुंबई होते हुए सात समुंदर पार। यह सपना कोई आज का नहीं है लेकिन इस सपने में राष्ट्रीयता की छौंक लगने के बाद भी देश को सही रास्ता क्यों नहीं मिल रहा है। इसे आरएसएस भी कभी समझ नहीं पाया और शायद प्रचारक से प्रधानमंत्री बने मोंदी का संकट भी यहीं है कि जिस रास्ते में वे चल निकले हैं, उसमें गांव कैसे बचेंगें यह किसी को पता नहीं।

पलायन ं रूकेगा इस पर कोई काम नहीं हो रहा है। सवा सौ करोड की जनसंख्या सकारात्मक तौर पर काम करते हुए देश को बनाने संवारने लगे इस दिशा में कभी किसी ने सोचा नहीं। पानी बचाने और उर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों की ओर बढते हुए कभी सरकारों ने कोई सक्रियता नहीं दिखाई। बने हुए शहर अपनी क्षमता से ज्यादा लोगों को पनाह दिए हुए हैं, उसे कैसे रोकें? या शहरों का विस्तार पानी, बिजली, सड़क की उपलब्ता के अनुसार हीं हो, इस पर कोई बात करने को तैयार हीं नहीं। तो फिर बदलाव का रास्ता है क्या?

जरा सफलता से समझे तों हर गांव के हर घर में शौचालय से लेकर पानी– निकासी और बायोगैस उर्जा से लेकर पर्यावरण संतुलन बनाने की दिशा में काम होना चाहिए। तीन या चार पढें लिखे लोग हर गांव को सही दिशा दे सकते हैं। देश में करीब छह लाख अढतीस हजार गांव हैं। तीस लाख से ज्यादा बारहवीं पास लोगों को सरकार नौकरी भी दे सकती है और गांवों के पुननिर्माण की दिशा में कदम भी उठा सकती है। फिर कुंऐं, तालाब, बावडी से लेकर बारिश के पानी को जमा करने तक पर कोई काम क्यों नहीं हुआ। जल संसाधन मंत्रालय का काम क्या है।

निजी क्षेत्र के हांथ में पावर सेक्टर आ चुका है। तो फिर खर्च कर वह वसूलेगा भी। तो मंहंगी बिजली गांव वाले कैसे खरीदेंगे। और किसान मंहंगी बिजली कैसे खरीदेगा। अगर ये खरीद पायेगे तो अनाज का समर्थन मूल्य सरकार को हीं बढाना होगा। यानि मंहगे होते साधनों की कीमत वृद्धि पर रोक लगाने का कोई मॉडल सरकार के पास नहीं है।

सबसे बडा सवाल यहीं है कि बदलाव के जनादेश के बाद क्या वाकई बदलाव की खुशबू देने में मोदी सरकार है। क्योंकि छोटे बांध, रहट से सिंचाई, रिक्शा और बैलगाडी, सरकारी स्कूल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, सौर उर्जा या बायोगैस सब कुछ खत्म कर जिस विकास मॉडल में सरकार समा रहीं है उस रास्ते में पहाडियों से पानी अब झरने की तरह गिरता नहीं है। सडकों पर अब साईकिल के लिए जगह नहीं है। तभी तो मोदी ने रेल बजट का इंतजार नहीं किया और रेल यात्रियों का सफर अब चौदह फीसदी मंहगा कर दिया, यह जानते हुए कि भारत में रेलगाडी का सफर सबसे ज्यादा कमजोर तबका करता है।

2. श्री गिरिराज किशोर, जनसत्ता सत्ताईस जून से

इस बार मोदी जी ने मंत्रालय के बटवारे के प्रयोग किए हैं। यह उनका विशेषाधिकार है। उस पर प्रश्नचिन्ह लगाना ठीक नहीं, मगर चर्चा हो सकती है।

एकाएक कई समस्याऐं सामने आ गईं। सबसे पहली गांठ तो केंद्रीय रसायन राज्यमंत्री निहालचंद के उपर लगे बलात्कार के आरोप की हैं। मोदी ने राष्ट्रपति के भाषण पर अपना उत्तर देते हुए दागी सांसदों के उपर कहा था कि एक साल के अंदर लंबित मुकद्दमें तय किए जायें, जो निर्दोष हों वे बने रहें जो दागी साबित हों वे जेल जायें।

इस बात से लोगों को लगा था कि मोदी संसद में दिए गए आश्वासन पर जरूर अमल करेंगे। पर रसायन मंत्री ने गाडी अटका दी। राजस्थान के भाजपा सरकार के मंत्री राठौर साहब उन्हें निर्दोष बता रहें हैं। अब तो पूरी पार्टी समर्थन में आ गई है। पीडित महिला ने अपने सम्मान की बाजी लगाकर पुनर्विचार याचिका दायर की। क्या वह झूठ बोल रहीं हैं? अगर बोल भी रही हैं तो पार्टी मोदी जी के संसद में दिए गए आश्वासन का सम्मान तो करे।

रसायन मंत्री संसद का टिकट पाते समय कथित दागी रहे होंगे। जहां इतने तथाकथित अन्य दागी प्रत्याशियों को टिकट मिला, उन्हें भी मिल गया। पर मंत्री को समन मिलना, वह भी बलात्कार के मामले में, नाजुक बात है। प्रधानमंत्री चुप हैं। भाजपा उन्हें बने रहने के लिए कह रही है। आधी आबादी के सम्मान का सवाल है। उन्हें कह सकते हैं कि त्यागपत्र दे दो, जब पाक साफ होकर आओगे तो हम राज्यमंत्री क्या पूरा मंत्री बना देगे। महिलाओं को इस बात से सम्मान भी मिलेगा और आश्वासन भी, कि प्रधानमंत्री महिलाओं के आश्वासन के प्रति गंभीर है। वरना सरकारों का स्थायी जवाब होता है कि जब तक कोई दोषी साबित नहीं हो जाता, उसे दंडित नहीं किया जा सकता। यही भाजपा कर रही है। खैर, यह निर्णय तो प्रधानमंत्री के अधिकार क्षेत्र में आता है।

दूसरा संकट मंहगाई का है। प्रधानमंत्री और उनके सहयोगी मंहगाई के सवाल से जूझ रहे हैं, क्योंकि अच्छे दिन आने वाले हैं का नारा इसी बात को लेकर दिया गया था। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय कंपनियां कह रहीं हैं कि पता नहीं अच्छे दिनों के लिए कितना इंतजार करना पडेगा। अच्छे या बुरे दिन सरकार के हाथ में नहीं होते। उनके लिए बहुत से तत्व जिम्मेदार होते हैं। कांग्रेस के बुरे दिन मोदी के अच्छे दिन में बदल गये। जनता के दिन वर्तमान हालात में बुरे दिन बन कर हीं न रह जायें। चैनलों ने तो नारे में से अच्छे दिन शब्द को काट कर मंहगे दिन कर दिया है।

ईराक का सिया–सुन्नी झगडा और सुन्नियों का इतना अधिक आक्रामक होते जाना कि हुकूमत को निष्क्रिय बना कर देश के बहुत बडे हिस्से पर अपनी हुकूमत कायम कर लेना, दूसरे देशों की आर्थिक स्थिति बदल रहा है। ईराक पेट्रोल का बडा पूर्तिकर्ता देश है। हिंदुस्तान के लिए दूसरे नंबर का पूर्तिकर्ता है। वहां के सबसे बडे शोधक कारखाने के पचहत्तर प्रतिशत् हिस्से पर विद्रोहियों का कब्जा था। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के दाम भी बढ़ गयें। पेट्रोल और डीजल के दाम यदि बढ़ते हैं तो हिंदुस्तान में मंहगाई भी बढ़ेगी।

सरकार हर क्षेत्र में सब्सिडी लेने की बात कर रही है। रेल मंत्री ने किराया 14.2 फीसदी बढ़ा दिया। उनका कहना था कि पहली सरकार का प्रस्ताव था, उसे लागू किया गया। यह सरकार पहली सरकार के मंसूबों को बिना

नुक्ता लगाये यदि क्रियान्वित कर रही है तो फिर नयी सरकार की मौलिकता कहां रही। वैसे पहली सरकार ने कभी इतना किराया नहीं बढाया। यह सरकार तो उनके किराये में दो प्रतिशत् भी कम करने को तैयार नहीं हुई।

उत्तर– आप दोनों हीं विख्यात लेखक हैं परन्तु आप दोनों के लेख पढ़कर ऐसा लगा जैसे कि आप जान बूझकर नई सरकार के विरूद्ध कुछ लिखने के लिए लिख रहे हैं। आप के लेखन मे विचार कम प्रचार अधिक दिखा। आप दोनों ने ऐसी बातें लिखी जैसी कोई विपक्षी दल का समर्थक सत्तारूढ़ दल के लिए कहता है। स्पष्ट है कि कांग्रेस की सत्ता के समय ऐसे हीं विचार भाजपा वाले व्यक्त करते थे और वैसे हीं विचार कांग्रेस वाले अब भाजपा के लिए व्यक्त कर रहे हैं। वही मंहगाई का घिसा पिटा टेप, गरीबी दूर करने की मांग, रेल यात्रा मंहगी होने का रोना, बेरोजगारों से सहानुभूति का नाटक आदि सभी प्रयत्नों में से आपने कोई भी प्रयत्न नहीं छोडा।

एक ओर तो आप रेल यात्राओं के साथ गरीबों को जोडने की बात कर रहे हैं तो दूसरी ओर आप हीं ग्रामीण अर्थव्यवस्था अथवा साईकिल वालों की भी वकालत कर रहे हैं। स्वाभाविक है कि दोनों बाते न एक साथ कभी हुई हैं न संभव हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आज तक मंहगाई न कभी बढी है न उसका कभी कोई दुष्प्रभाव हुआ। लेकिन सरसठ वर्षों से लगातार मंहगाई को एक राजनैतिक मुद्दा बनाकर उसका सत्ता संघर्ष के लिए प्रयोग हुआ है। यही बात करीब– करीब बडे उद्योगों अथवा अमेरिका के लिए भी लागू होती हैं। पंडित नेहरू से लेकर आज तक न इन बातों में कोई परिवर्तन हुआ है न दिखा। क्योंकि यदि भोजन मुंह से करना प्राकृतिक है तो चाहे नेहरू हों या मोदी, भोजन मुंह के अतिरिक्त किसी अन्य जगह से करना संभव नहीं है। यह अलग बात है कि जो सत्ता में होता है उसके मुंह से किए जा रहे भोजन का विपक्ष मजाक भी उडाता है तथा विरोध भी करता है। यहीं कार्य मनमोहन सिंह के कार्यकाल में मोदी जी ने किया और वही अब कांग्रेस कर रही है। चूंकि आप घोषित राजनीति बाज नहीं हैं इसलिए आपकों ऐसा करना ठीक नहीं है। आप दोनो गंभीर विचारक होते हुए भी आज तक नहीं समझ सके कि स्वतंत्रता के बाद आज तक सरकार चाहे किसी की बनी हो किंतु गरीब और अमीर के बीच अर्थनीति समान होती है। वह यह है कि जो चीज गरीब ज्यादा उपयोग करे उस पर अप्रत्यक्ष कर तथा प्रत्यक्ष सब्सीडी दी जाये दूसरी ओर जो चीज सम्पन्न ज्यादा उपयोग करे उस पर प्रत्यक्ष कर तथा अप्रत्यक्ष सब्सीडी दी जाये। सरसठ वर्षों से साईकिल पर लगातार टैक्स बढ़ते बढ़ते अब प्रति साईकिल करीब चार सौ रूपये हो गया है तो रसोई गैस पर सब्सीडी भी बढ़ते बढ़ते चार सौ रूपया हो गई है। यह बात 67 वर्षों में आप जैसे विद्वान समझे नही या समझना नहीं चाहते यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

मोदी सरकार न भ्रष्टाचार के कारण आई है न मंहगाई के कारण। वह आई है भाजपा रहित नेताओं द्वारा एकपक्षीय मुसलमानों की ओर झुकाव के कारण। अन्य अनेक मुद्दे तो जुडते चले गए। इस चुनाव में एक खास बात यह भी जुडी कि सोनिया जी ने लगातार मनमोहन सिंह सरीखे भले आदमी को पुत्र मोह में परेशान किया। मेरे विचार में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आज तक मनमोहन सिंह सरीखा शरीफ, योग्य तथा लोकतांत्रिक प्रधानमंत्री नहीं हुआ और मोदी भी उस योग्य नहीं है। मोदी में प्रधानमंत्री बनने की योग्यताऐं मनमोंहन से ज्यादा हैं किंतु मनमोहन सिंह की लोकतंत्र के प्रति आस्था इन सभी अन्य योग्यताओं से भारी है। सोनिया ने जिस राहुल पर दांव लगाया, उनमें

शराफत भले हीं सबसे ज्यादा हो, किंतु राजनैतिक योग्यता न के बराबर है। सोनिया द्वारा किया गया मनमोहन सिंह के प्रति पाप हीं कांग्रेस अर्थात् सोनिया को ले डूबा। अब आप लोग भले हीं कुछ भी कहें किंतु अब तक जो मोदी ने किया है वह बहुत अच्छा किया है। रेल भाडा बढाना उनका एक बहुत अच्छा कदम था। अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए अन्य आर्थिक कदम भी उठाने चाहिए थे। मोदी जी ने हिंदी के प्रति भी एक अच्छा संदेश दिया है। भ्रष्टाचार भी कम होने की उम्मीद है। मुसलमान भी अब हिंदुओं से उपर समझनें की भूल नहीं कर रहे। नक्सलवाद पर भी कुछ ठोस संकेत की तैयारी है। मुझे तो अब तक ऐसा कुछ नहीं दिखा जिसके लिए मैं मोदी जी की आलोचना करूं।

इन सबके बाद भी मुझे जो संदेह हुआ कि मोदी जी लोकप्रियता के शिखर पर जाकर तानाशाह हो सकते हैं वह खतरा अभी टला नहीं है। आगे– आगे देखिये होता है क्या?

आपने अपने लेख में लगातार वर्षों से अकाल की बात कहकर समस्या को अनावश्यक गंभीर बनाने की चेष्टा की है। किंतु आपने कोई समाधान नहीं दिया। आपने मनमोहन सिंह द्वारा विदेशी पेंशन लेकर अपना प्रधानमंत्री का वेतन नहीं लिया, इसका भी मज़ाक उडाया। आपने मोदी के हर कार्य की आलोचना मात्र की किंतु समाधान नदारत। आपने एक सुझाव दिया कि तीस लाख से ज्यादा बेरोजगारों को तत्काल नौकरी दे दें। रेलगाडी पर भाडा न बढे, डीजल– पेट्रोल का मूल्य न बढे और नौकरियां दे दी जायें। यह विचार आप जैसे विद्वान की नीयत पर शक् पैदा करता है। मैं आपको स्पष्ट कर दूं कि भेडिया आया भेडिया आया का झूठा हल्ला करने वाला यदि विश्वास खो बैठा तो भेडिया आने के बाद कोई भी बचाने नहीं आयेगा। अच्छा हो कि मोदी जी को बदनाम करने की जल्दबाजी में आपकी विश्वसनीयता खतरे में न आ जाये।

गिरिराज जी ने पीडित महिला की पुनर्विचार याचिका को ऐसा सच्चाई का प्रमाण–पत्र दे दिया जैसे कि कोई महिला झूठ बोलती हीं नहीं। किसी महिला ने आरोप क्या लगा दिया कि वह पुरूष बलात्कारी सिद्ध हो गया। ऐसा लगा कि जैसे आप ऐसे किसी आरोप की प्रतीक्षा कर रहे थे। आरोप लगते हीं प्रधानमंत्री तक से आपका जवाब सवाल शुरू। निहाल चंद का केस पहले हीं जांच उपरांत न्यायालय से वापिस हो चुका है और जब जांच हुई उस समय कांग्रेस की सरकार थी। दूसरी बार उपरी अदालत में याचिका दायर हुई है। दूसरी बात कि मामला तीन वर्षों तक न्यायलय में रहा। तीसरी बात कि महिला ने अपने पति सहित सत्रह को अपराधी बताया है जिन्हें नोटिस हुआ है। आम तौर पर कोर्ट ऐसे मामलों में नोटिस करता हीं है। लगता है श्री गिरिराज जी महिला फोबिया में बह गये जिसमें महिलाओं के प्रति एकपक्षीय सहानुभूति की बाढ़ आई हुई है। जिसमें हर महिला उन्हें एकदम सच्ची हीं दिखती है।

आपने मंहगाई पर भी अनावश्यक इतना लिखा कि ईराक युद्ध, तेल की कीमत, बिजली की मूल्य वृद्धि, किसान की असमर्थता, सरकारी राशन आदि की एक माला पिरोकर आपने ऐसा बनाया जैसे कि कोई बहुत बडा संकट आने वाला है। बहुत हो चुका मंहगाई का नाटक। अब यथार्थ की चर्चा करना अधिक अच्छा होगा। जब मंहगाई है हीं नही ंतो उसका समाधान क्या होगा? सरकार चाहे किसी की भी हो किंतु न मंहगाई का समाधान

होगा, न आप लोग समाज में भ्रम फैलाने से चूकेंगे। यदि मंहगाई है तो स्वतंत्रता के बाद लगातार कमजोर से कमजोर वर्ग का भी जीवन स्तर कैसे सुधर रहा है?

3. बेचू बीए, कुशीनगर, उत्तरप्रदेश 4265

मेरे द्वारा भेजे गए दिनांक 15.05.2014 के पत्र का विधिवत उत्तर आप द्वारा मिला। हमें उम्मीद न थी कि आप मेरे खत का उत्तर देंगे, लेकिन आप ने न केवल उत्तर दिया बल्कि पत्र में आप ने जो कुछ लिखा उससे हमें काफी बल मिला, यही नहीं कुछ ऐसे शब्द मिले जो हृद्य को छूने के अलावा उसे जीवन में उतार भी लिया। इसके लिए आप को कोटिश धन्यवाद्।

आपने भावनाओं और विचारों की लडाई में विचार को काफी महत्व दिया है, लेकिन यह विश्व का इतिहास साक्षी है कि जहां विचारों से बडे–बडे तानाशाहों की नींव हिल गई है वहीं भावनाओं से भी तमाम राजाओं के राजपाट उलट–पलट गए हैं। जहां विचार हैं वहीं भावनाऐं भी हैं, इसे नकारा नहीं जा सकता।

प्याज के छिलके को जितना छीलेंगे, उतना हीं छिलता जायेगा और अंत में हांथ में सिर्फ छिलका हीं रह जाएगा। मैं नहीं कहता कि सब दोष महिलाओं का है, उससे बढ़कर पुरूष भी ऐसे–ऐसे बयान दे देते हैं, ऐसे लेख वगैरह लिख देते हैं, जिससे नारित्व शर्म से लाल हो जाता है। बल्कि देश भी स्तब्ध रह जाता है। मैं यहीं अपने विचार को समेट रहा हूँ। हमारे पत्र का उत्तर मिल गया, हम संतुष्ट हुए।

उत्तर– विचार और भावना का संतुलन आवश्यक है। यदि समाज में किसी एक का संतुलन खो जाये तो कठिनाई होती है। वर्तमान समय में विचारकों का अभाव हो गया है। परिणामस्वरूप धुर्त लोग विचारक बनकर भावनाप्रधान लोगों का नेतृत्व करना शुरू कर देते हैं। भावनाप्रधान स्वयं तो उचित–अनुचित का निर्णय नहीं कर पाते तथा ऐसे धुर्तों के प्रभाव में आकर उनके संगत में चलना शुरू कर देते हैं। आज देश में पीछे चलने वालों का अभाव नहीं है। अभाव है ऐसे विचारकों का जो ऐसे धुर्तों को विचार के माध्यम से चुनौती दे सकें।

सामान्यतः दो विचारक कभी एक साथ नहीं चल सकते। किन्हीं मुद्दों पर तो एक साथ हो सकते हैं किंतु हर बात पर एक नहीं होते। भावना प्रधान लोग जल्दी हीं एक हो जाते हैं। भावना प्रधान लोग जल्दी हीं दूसरों को जोडकर अपनें संगठन को मजबूत भी करनें लगते हैं। यदि असत्य विचारों को चुनौती देने की बारी आएगी तो भावना प्रधान सफल नहीं होगा, बल्कि विचारक हीं सफल होगा। किंतु यदि त्याग की आवश्यकता होगी तो वह विचारक नहीं कर सकता। त्याग भावना प्रधान हीं कर सकता है। वह त्याग समाज हित में हीं संभव है और विरूद्ध भी। आज समाज में जान देने वालों की कमी नहीं। आवश्यकता है ऐसे लोगों के सही मार्गदर्शन की। मैं ऐसा हीं प्रयास कर रहा हूँ।

4. ओम प्रकाश मंजुल पीलीभीत उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व 6011

संविधान मे धारा 370 के तहत कश्मीर को विशेष सुविधाए दी गई है। इसमे एक प्रमुख प्रावधान यह भी है कि कश्मीर मे दूसरे प्रान्त का कोई व्यक्ति जगह और जमीन नही खरीद सकता। (जबकि कश्मीर का निवासी भारत के किसी भी प्रान्त मे चल और अचल सम्पत्ति खरीद सकता है) । धारा के इस अकेले प्रावधान का ऐसा विलगाववादी व विनाशकारी प्रभाव पडा कि कश्मीर मे रहने वाले बहु संख्यक समुदाय की मानसिकता से राष्ट्रवाद गायब होता गया और जहन मे छुद्र क्षेत्रवाद एंव संकीर्ण साम्प्रदायिकता का जहर घुलता गया । इस जहर को बनाने और बढाने मे परोक्ष रूप से पाकिस्तान का कई मायनो और रूपो मे हाथ रहा, जो आज भी बदस्तूर जारी है।

असल मे धारा 370 की विचारधारा ही विघटनकारी व विनाशकारी है। इस धारा के चुल्हे पर सभी प्रमुख पार्टियों ने राष्ट्रहित को धता बताकर अपने स्वार्थ की रोटियां सेकी हैं। इसके साथ सबसे अधिक समय तक और सबसे अधिक खतरनाक खेल कांग्रेस ने खेला। दिल्ली प्रान्त मे जुमा जुमा 4 दिन तक शासन करने वाली कल बनी और आज ही मिटने के कगार पर खडी आम आदमी पार्टी तक ने कश्मीर समस्या के समाधान के लिये जनमत संग्रह का तर्कहीन सुझाव दे डाला । वोटो के बदले ऐसे नेता देश को भी थाल मे सजाकर शत्रु को देने के लिये उतावले हैं। आज की बात छोडिये एक राष्ट्रपति के काल मे बंगला देश के घुसपैठिये पूर्वोत्तर राज्यो असम, बंगाल आदि में बेधडक आते रहे और इस क्षेत्र को मुस्लिम बहुल बनाने का सफल प्रयास करते रहे । ऐसा ही कश्मीर मे होता रहा । कांग्रेस मुस्लिम वोटो की लालसा मे कृपा स्वरूप आंखे मीचे रही और पाकिस्तानी अबाध रूप से कश्मीर मे आते रहे । ये घुसपैठिये एक ओर कश्मीर मे मुस्लिम सघनता बढातें रहे दूसरी ओर अनेक प्रकार की आतंकी गतिविधियां चलाते रहें। पाक की सीमा पर देश के सभी जाति धर्म वालो का जमावडा रहता तो पाक के होश हमेशा ठिकाने रहते । दूसरी ओर सामाजिक समरसता एंव राष्ट्रीय भावना भी अधिक बलवती बनती । कश्मीर में आतंकवाद के कारण लाखो कश्मीरी ब्राम्हणो को जान की गवानी पडी और अपने ही देश के कश्मीरी ब्राम्हण ही क्यो, चीन के भय से भागे हुए तिब्बत के लाखो लामा आज भारत नेपाल और म्यांमार आदि मे शरणार्थियों की भांति दिन काटने के बजाय कश्मीर मे आकर ही आश्वस्त रूप से रह रहे होते । पर वे देख ही रहे है कि कश्मीर मे भारत अपने ही नागरिको की रक्षा नही कर पा रहा हैं तो हमारी क्या कर पायेगा।

कश्मीर को पृथ्वी का स्वर्ग कहा जाता है। पर आज धारा 370 ने कश्मीर को कलंकित कर रखा है। कम धाराओ वाले संविधान को अच्छा संविधान माना जाता है। इस मामले मे इंग्लैड के संविधान की मिसाल दी जाती हे। जबकि हमारे संविधान मे धाराओ की इतनी भरमार है कि इसने पूरे देश को ही धाराओं की धार से अगणित धाराओ मे बांट रखा हैं यह धारा कश्मीर के निवासियो के लिये भी आत्मघाती है। इसकी बैसाखियों के कारण एक ओर कश्मीरियों की कलाकुशलता और कर्मशीलता कुंद होती जा रही है, दूसरी ओर उनके लिये केन्द्र से आने वाली सुविधा पैकेज का पैसा पानी रूपी राज्यमंत्रालय मे ही लीकेज होता रहा है।

भारत सरकार को विधेयक लाकर इस अहितकारी धारा का शीघ्र उन्मूलन कर देना चाहिये। इस पर सेमीनार या डिबेट कराने की जरूरत नही है। अन्यथा लोग अपनी बौद्विकता एंव छदम धर्मनिरपेक्षता के प्रति तथाकथित सहानुभूति प्रदर्शन करके निषेधात्मक तर्को से मूल मुद्दे को ही ऐसा विकृत कर देंगे, जैसे किसी चित्रकार द्वारा

निर्मित सुन्दर चित्र को समीक्षक चित्रकारो ने ठीक करने के नाम पर उसे ऐसा लीपा पोता कि मूल चित्र ही मिट गया। इस समय भाजपा यदि चूकती है तो वह अपने एजेंडा से मुकरेगी ही, विरोधियों को प्रश्न पूछने के लिये मुखरित भी करेगी। अटल सरकार द्वारा राम मंदिर न बनवा पाने पर राम मंदिर कब बनेगा? का प्रश्न सर्वाधिक विरोधी कांग्रेसी ही पूछा करते थे। पर उस समय अटल की सरकार मे दो दर्जनाधिक दल थे, जबकि आज भाजपा के पास स्पष्ट बहुमत (clear majority) से भी बहुत आगे अधिक बहुमत (big majority) है। इस बार चूकना भाजपा को भविष्य मे भारी पड सकता है।

उत्तर– आप जैसा गंभीर विचारक एक माह पूर्व बनी सरकार को ऐसी प्राथमिकताओ की सलाह दे रहा है, यह ठीक नही लगा। धारा तीन सौ सत्तर हटनी चाहिये। इसका अंतिम निर्णय कश्मीर के लोग करेंगे अथवा शेष भारत के लोग। बिना बहस किये, बिना आपसी सहमति बनाये इस प्रावधान को तत्काल खत्म कर दे यह ऐसी मांग है जैसे कि किसी भिश्ती को सिर्फ एक ही दिन का शासन मिला हो और उसे जल्दी जल्दी बिना विचार मंथन के तथा बिना विश्व स्थितियों का आकलन किये तुरंत कुछ कर देने की जल्दी हो । मेरे विचार मे आप भाजपा सरकार के इतने अल्पकालीन उम्र की कल्पना मत करे।

कश्मीर का मामला भारत पाकिस्तान तक सीमित नही है । विश्व इस्लामिक बिरादरी के भी कुछ तत्व कश्मीर मामले मे गहरी रूचि रखते है । यह समय भारत मे पिछली सरकारों द्वारा एक पक्षीय इस्लाम समर्थक नीतियो को पलटकर बदला लेने का नही है। मै मानता हूँ कि पिछली सरकारो के कार्यकाल मे हिन्दू एक दोयम दर्जे की जमात बनकर रह गया था किन्तु अब आपका उद्देश्य हिन्दुओं को पहले दर्जे का नागरिक बनाना है तो यह ठीक नही है। मुरार जी की सरकार ऐसी ही जल्दबाजी मे गई थी और यदि अटल जी भी मंदिर मुद्दे को सर्वोच्च प्राथमिकता देते तो परिणाम बुरे ही होते। आज भारत मे समान नागरिक संहिता तथा धर्म परिवर्तन कराने के प्रयत्नो पर प्रतिबंध, मंदिर या धारा तीन सौ सत्तर से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। समान नागरिक संहिता मे भारत धर्मो जातियों का संघ न होकर एक सौ पचीस करोड व्यक्तियों का संघ होगा, जहां प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी मामले मे समान अधिकार होगे। धर्म परिवर्तन करने की छूट होगी, किन्तु कराने पर रोक होगी।

आप कश्मीर से धारा तीन सौ सत्तर हटाना चाहते हैं। कल्पना करिये कश्मीर सहित सम्पूर्ण भारत के प्रत्येक गांव को यह अधिकार दे दिया जाय कि किसी भी व्यक्ति को ग्राम सभा की अनुमति से ही गांव मे बसने का अधिकार होगा तो क्या–क्या समस्याऐं आ सकती है? आप सरकार सशक्तिकरण की जगह परिवार और गांव सशक्तिकरण पर भी सोचिये। आप केन्द्रीयकरण के स्थान पर अकेन्द्रीयकरण को भी समझने का प्रयास करे।

आप यह बात याद रखिये कि भारत की नयी सरकार मे हिन्दू राष्ट्र की प्राथमिकता वाले लोग ज्यादा है। दुनिया देख रही है कि ये लोग कब धर्म निरपेक्षता की लीक से हटते है। दूसरी तरफ भारत के ही राष्ट्रवादी तत्व इस तरह हवा दे रहे है जैसे कि अमेरिका, चीन, पाकिस्तान आदि से एक साथ टकरा जाना उचित होगा। मै इस मत के पक्ष मे नही। भारत को किसी से बदला लेने की अपेक्षा वास्तविक धर्मनिरपेक्षता की ओर चलना भी चाहिये और दिखना भी चाहिये। मै आपकी छटपटाहट को महसूस करते हुए भी ऐसी जल्दवाजी के पक्ष मे नही। मैं नहीं जानता कि किस राष्ट्रपति के कार्यकाल में विदेशी मुसलमानों का भारत में प्रवेश शुरू हुआ। यदि ऐसा हुआ भी तो उस

राष्ट्रपति के जाने के बाद यह प्रवेश रूक जाना चाहिए था। मेरी समझ में ऐसा प्रवेश जब से शुरू हुआ है तबसे लगातार बढ़ता हीं गया है चाहे प्रधानमंत्री कोई भी हो चाहे राष्ट्रपति कोई भी हो। मैं नहीं समझता कि धारा 370 हटा देने से यह प्रवेश रूक जायेगा। विदेशी मुसलमानों का भारत प्रवेश बिल्कुल अलग विषय है और धारा 370 बिल्कुल अलग। विदेशी मुसलमानों का भारत में प्रवेश मुख्यतः आसाम में है जबकि 370 वहां नहीं है। जो लोग 370 के हटते हीं कश्मीर में आबादी का अनुपात बदल देने की बात कहते हैं वे कुछ दिनों के लिए आसाम में जाकर क्यों नहीं बस जाते हैं। मैं नहीं समझता कि भारत का हिंदू इतना खतरा उठाने को तैयार है। आप भले हीं तैयार हों लेकिन मैं तो नहीं हूँ। क्योंकि मुसलमान, राष्ट्र और समाज की अपेक्षा धार्मिक आधार पर अपनी संख्या विस्तार के पक्ष में खतरा उठाने तक को तैयार रहता है जबकि हिंदू धर्म और राष्ट्र की अपेक्षा समाज को अधिक प्राथमिकता देता है। अच्छा हो कि हम हिंदुओं को मुसलमानों का अनुकरण करने की सलाह देने की अपेक्षा मुसलमानों को सलाह दें कि वे अपनी सोच में बदलाव लायें और यदि वे सहमत न हों तो हम समान नागरिक संहिता लागू कर दें।

आपको ऐसा लगता है कि धारा तीन सौ सत्तर के हटते ही देश के गैर कश्मीरी लोग जाकर वहां रहने लगेंगे और कश्मीर का धार्मिक संतुलन बदल जायेगा। मै आश्वस्त हूँ कि कश्मीर से जब तक आतंकवाद नही जायेगा तब तक कश्मीर से बाहर के लोग धारा हटाने के बाद भी नही बसेंगे। छत्तीसगढ के बस्तर के कुछ भू भाग पर ऐसी धारा नही है। क्यों नही ऐसे लोग उस क्षेत्र मे जाकर बस जाते है। वहां बसने वालो को तो छत्तीसगढ सरकार प्रोत्साहित भी कर सकती है। कश्मीरी ब्राम्हण वहां से आतंक के भय से भागे है न कि धारा 370 के कारण। कश्मीरी ब्राम्हणो के पलायन के लिये धारा तीन सौ सत्तर जिम्मेदार नही।

कश्मीर मे जनमत संग्रह का सुझाव कभी आम आदमी पार्टी ने नही दिया। यह सुझाव तो कभी आम आदमी पार्टी की बैठक मे आया भी नही तो स्वीकार करने का तो प्रश्न ही नही है। यदि प्रशान्त भूषण के प्रस्ताव को आम आदमी पार्टी का मान लिया जाये तब तो यह भी कहना पडेगा कि प्रशान्त भूषण को पीटने वाले किसी एक वर्ग विशेष के लोग थे । मेरे विचार से ऐसा सोचना अतिशयोक्ति होगी।

मुझे महसूस होता है कि आप कश्मीर समस्या को भारत और पाकिस्तान के बीच तौल रहे है। बात इतनी सीधी सादी नही है । कश्मीर को भारत का अंग देखकर ऐसे साम्प्रदायिक तत्वो को कष्ट होता है, जिनका उददेश्य दारूल इस्लाम के लिये जान देने की हद भी पार कर जाता हे। भारत के लोग धर्म का वह अर्थ नही मानते जो कटटरपंथी मुसलमान मानते है। अतः सरकार पर भरोसा रखिये । विश्व परिस्थिति के अनुसार ऐसे संवेदनशील मामलो पर उन्हे गंभीरता से निर्णय करने दीजिये। दुनिया को ऐसा विश्वास मत होने दीजिए कि भारत सरकार कट्टरपंथी हिंदुओं के दबाव में आकर न चाहते हुए भी कुछ कदम उठा रही है।

5.श्री ओम प्रकाश मंजुल, पीलीभीत उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व 6011

विचार– मैंने मंदिर में मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा के अवसर पर देखा कि मंदिर में अन्य मूर्तियों के साथ– साथ साईं बाबा की मूर्ति भी स्थापित की जा रही है। मुझे दुख भी हुआ और आश्चर्य भी कि किस प्रकार हिंदू धर्म व्यवस्था को लावारिस माल समझकर कुछ लोग उसके साथ मनमानी कर रहे हैं। अब जब शंकराचार्य जी ने पोल खोली तब मैंने

साई की मूर्ति शामिल करने वालों को कटघरे में खडा किया और तब उन्होनें साई मूर्ति को बाहर रखने की बात कही। इस संबंध में आपका क्या विचार है?

उत्तर– शंकराचार्य स्वरूपानंद सरस्वती तथा साईं भक्तों के बीच का विवाद एक जटिल मुद्दा है। मेरे विचार से साईं भक्तों का आचरण ज्यादा गलत दिखता है।

हिंदू धर्म व्यवस्था एक समुद्र के समान है। इस व्यवस्था में यदि कोई हिंदू साईं को भगवान माने तो उसे रोका नहीं जा सकता न हीं उसे हिंदू धर्म से बाहर किया जा सकता है। साईं भक्तों को पूरी स्वतंत्रता है कि वे मंदिर बनावें। जब पहली बार शंकराचार्य जी का बयान सुना तो मुझे भी लगा कि बयान गलत है। आप किसी की स्वतंत्रता नहीं छीन सकते। किंतु जब स्पष्ट हुआ कि शंकराचार्य जी ने हिंदू धर्मावलंबियों को सलाह दी है कि वे साईं को भगवान न मानें तो मेरे विचार में उन्हें सलाह देने की स्वतंत्रता है। सलाह मानना न मानना आपकी स्वतंत्रता है। आप साईं को भगवान मानकर पूजते हैं तो शंकराचार्य जी ने आपकी पूजा में कोई बाधा तो पैदा नहीं की है। किंतु साईं भक्तों ने जिस तरह शंकराचार्य जी के पुतले जलाये वह पुतले जलाना विचार प्रस्तुति से आगे जाकर क्रिया के रूप में बदल गया जो गलत था। यदि शंकराचार्य जी आपके मंदिर से साईं की मूर्ति निकलवाते तब आपको सड़कों पर उतरना उचित होता किंतु यदि कोई अपने मंदिर से साईं की मूर्ति बाहर कर दे तो आप उसके लिए कुछ नहीं कर सकते। अपने संगठन के सदस्य को या अपने भक्तों को सलाह देने से आप नहीं रोक सकते। आप जिस तरह से साईं को भगवान कह सकते हैं उसी तरह दूसरा व्यक्ति साई को साधारण मनुष्य भी कह सकता है। यदि शंकराचार्य जी साईं को मुसलमान या मांसाहारी बता रहे हैं तो आप उनसे प्रमाण मांग सकते हैं अथवा उन्हें झूठा कह सकते हैं किंतु सड़कों पर विरोध प्रकट नहीं कर सकते। यदि आपकी भावनाओं को चोट लगती है तो वास्तव में आपका इलाज कराने की जरूरत है क्योंकि आप के अंदर भावनाओं तथा विचार का संतुलन नहीं रहा। यदि आपकी भावनाओं को चोट लगी है तो मेरे विचार में ठीक हुआ है क्योंकि भावनाऐं आजकल अनेक विचारहीनों की जल्दी भडक जाती हैं। जिसका फायदा धूर्त लोग उठाते हैं। इस मामले मे भी कहीं वैसा हीं तो नहीं हो रहा है।

उत्तरार्ध

जंतर–मंतर पर दस दिवसीय धरना सम्पन्न

दिनांक 13 जून 2014 से 22 जून 2014 तक व्यवस्थापक अर्थात् व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी की व्यवस्था के अंतर्गत 10 दिवसीय धरना कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस आयोजन की व्यवस्था तीन प्रमुख संगठनों 1. व्यवस्था परिवर्तन मंच 2. लोकस्वराज्य मंच 3. तथा गांधी विचार मंच ने किया था। इस कमेटी में व्यवस्था परिवर्तन मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष आचार्य पंकज राष्ट्रीय उपाध्यक्ष छबील सिंह सिसोदिया गाजियाबाद लोकस्वराज्य मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष सिद्धार्थ शर्मा बैंगलोर कर्नाटक, राष्ट्रीय महासचिव रमेश चौबे जी पटना बिहार, गांधी विचार मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष ओमप्रकाश दुबे जी नोएडा तथा महासचिव ईश्वरदयाल जी नालंदा बिहार हैं। 10 दिनों के धरने में चार मांगें रखी गईं जिनका क्रम इस प्रकार से है:

1. **परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक अधिकार दिया जाये**
2. **राईट टू रिकॉल**
3. **लोक संसद**
4. **प्रत्येक व्यक्ति को 2000 मूल रूपया जीवन भत्ता**

प्रतिदिन इन चारों मांगो पर धरने में शामिल विद्वान विस्तृत विचार रखते थे। पहले सत्र में विद्वानों के विचार रखे जाते थे। तथा दूसरे सत्र में इन चारों मुद्दों पर तथा कुछ अन्य इनसे जुडे मुद्दों पर प्रश्नोत्तर का कार्यक्रम होता था। प्रश्नों के उत्तर आम तौर पर बजरंग मुनी जी दिया करते थे।

धरना कार्यक्रम लगातार दस दिनों तक चलता रहा। वक्ताओं ने पहले मुद्दे पर साफ किया कि वर्तमान समय में भारत में व्यक्ति, प्रदेश और केंद्र को संवैधानिक अधिकार प्राप्त हैं, किंतु परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं। यहां तक कि जाति धर्म को संवैधानिक अधिकार दिये गये हैं।

ग्राम सभाओं को राजीव गांधी ने 1992 में संविधान संशोधन द्वारा संवैधनिक अधिकार देने का प्रयास किया था जो अभी तक अधूरा पडा है। अर्थात् राज्य सरकारों ने अब तक वे 29 अधिकार गांवों को नहीं सौपे। परिवारों को तो कभी कोई संवैधानिक अधिकार दिया हीं नहीं गया। यह भी बताया गया कि यदि संवैधानिक अधिकार दे दिये जायेंगे तो सरकारों के अनेक विभाग टूट जायेंगे, खर्चा घट जायेगा, मुकद्में वाजी कम हो जायेगी तथा सरकार जो अभी बहुत बोझ उठाये हुए है वह बोझ कम हो जायेगा।

परिवारों की संवैधानिक व्याख्या करते समय परिवार की संपूर्ण संपत्ति में परिवार के प्रत्येक सदस्य को समान अधिकार देकर तथा पारिवारिक व्यवस्था में भी परिवार के प्रत्येक सदस्य को समान भूमिका देकर महिला सशक्तिकरण जैसे परिवार तोडक विचारों की हवा निकाली जा सकती है। वक्ताओं ने यह भी स्पष्ट किया कि यदि भारत में लोकतंत्र को जीवित रहना है तो परिवार व्यवस्था में भी लोकतंत्र आना चाहिए। यदि परिवार व्यवस्था पुराने तानाशाही तरीके से चलती रही तो भारत की संपूर्ण राजनैतिक व्यवस्था में लोकतंत्र कमजोर होता जाएगा। जिसके प्रारंभिक लक्षण मोदी जी के चुनाव जीतनें से दिखने लगे हैं। वक्ताओं ने यह भी बताया कि बढ़ी हुई समस्याओं के समाधान के लिए तानाशाही की तरफ स्वाभाविक झुकाव होता है। किंतु तानाशाही की अपेक्षा लोकस्वराज्य ज्यादा अच्छा मार्ग है।

2. राईट टू रिकॉल के संबंध में सभी वक्ताओं ने एक स्वर में इसकी आवश्यकता बतायी क्योंकि यह प्राकृतिक सिद्धांत होता है कि नियुक्तिकर्ता को यह स्वाभाविक अधिकार होता है कि वह नियुक्त को कभी भी निलंबित अथवा बर्खास्त कर सकता है। संसद या विधानसभाओं में जो लोग चुने जाते हैं उन्हें मतदाता हीं नियुक्त करते हैं। अतः मतदाताओं का यह स्वाभाविक अधिकार है कि वे जब चाहें उन्हें निलंबित या बर्खास्त करने की कार्यवाही कर सकें।

फिर भी प्रश्नकाल में यह बात प्रतिदिन पूछी जाती थी कि लाखेां मतदाताओं को राईट टू रिकॉल देने का क्या तरीका होगा। बजरंग मुनी जी इस प्रश्न का उत्तर देते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि प्रश्न करने का अधिकार सिर्फ उन्हीं लोगों को है जो राईट टू रिकॉल से सहमत हैं। उन्हें प्रश्न करने का अधिकार नहीं हैं जो इस योजना से

सहमत नहीं है, अथवा जिनके पास कोई अन्य योजना नहीं है। फिर भी मुनी जी ने राईट टू रिकॉल के 4 तरीके बताये हैं

1. चुनाव के समय हीं 100 व्यक्तियों में से एक को राईट टू रिकॉल के लिए चुन लिया जाये अथवा मतदाता सूची में से किसी एक अंक की लॉटरी निकालकर इस अंक के आधार पर राईट टू रिकॉल की मतदाता सूची बना ली जाये। अथवा ब्लॉक अध्यक्ष जो उस लोकसभा क्षेत्र के अंतर्गत आते हों उनके प्रस्ताव पर सभी सरपंच अथवा पंच मतदान करें। अथवा कोई अन्य भी सुझाव दिया जा सकता है। जिस आधार पर राईट टू रिकॉल की प्रक्रिया बनें। हमारा उद्देश्य किसी प्रक्रिया विशेष पर मांग करना नहीं है। बल्कि हमारा उद्देश्य कोई रिकॉल की प्रक्रिया करना मात्र हीं है।

तीसरा प्रस्ताव लोकसंसद का है। लोकसंसद बिल्कुल नया शब्द होने के कारण अपने साथियों की ओर से भी अनेक प्रश्न उठते रहे। बाहर के श्रोता तो लोकसंसद से अनजान थे हीं। मुनी जी ने बताया कि व्यवस्था का स्वाभाविक सिद्धांत होता है कि जो ईकाई कानून बनाती है तथा कानूनों का पालन कराती हैं उस इकाई को संविधान हीं अधिकार देता है। बिना संविधान से अधिकार लिये विधायिका, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका जरा भी आगे नहीं जा सकते। अर्थात् संविधान की भूमिका संसद से भी उपर है तथा निर्णायक भी। ऐसे संविधान में संशोधन के असीम अधिकार संसद के पास होना प्राकृतिक न्याय के विरूद्ध है। इस एकमात्र विसंगति ने हीं संसद को उत्श्रृंखल बना दिया। एक ओर तो संसद संविधान को ढाल के रूप में रखती रही तो दूसरी ओर उसमें मनमाना संशोधन का अधिकार भी रखती रही। ऐसे संविधान को संसद की कैद से बाहर रखना हीं लोकसंसद का उद्देश्य है। लोकसंसद वर्तमान संसद के वर्तमान कार्य में हस्तक्षेप नहीं करेगी किंतु यदि वर्तमान संसद संविधान में कोई संशोधन करेगी तो वर्तमान संसद और लोकसंसद दोनों की सहमति आवश्यक होगी। लोकसंसद तथा वर्तमान लोकसभा का चुनाव एक साथ एक हीं तरीके से होगा। परंतु लोकसांसद किसी भी राजनैतिक दल के चुनाव चिन्ह पर चुनाव नहीं लडेगे तथा उनका कोई वेतन भी नहीं होगा। यदि किसी विषय पर दोनों सांसदों में टकराव होगा तो जनमत संग्रह उस संविधान संसोधन पर अंतिम निर्णय करेगा।

चौथा विचार था जीवन भत्ता। हमनें राष्ट्रपति जी को लिखे पत्र में स्पष्ट किया है कि भारत के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन सुरक्षा भत्ता के रूप में दो हजार मूल रूपया प्रति व्यक्ति प्रतिमाह दिया जाये। भारत में बढती जा रही आर्थिक विषमता के लिए यह अच्छा समाधान है। विस्तृत विवरण देते हुए बताया गया कि इसके साथ– साथ हम यह भी सुझाव देते हैं कि गरीब ग्रामीण, श्रमजीवी, छोटे किसान के किसी भी उत्पादन तथा उपभोग पर लगने वाले सभी कर माफ कर दिये जायें। इससे होने वाले व्यय की पूर्ति के लिए सब प्रकार की सब्सीडी समाप्त कर दी जाये। तथा जितना पैसा कम हो उतना कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि से पूरा कर लें। यदि कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि बहुत अधिक दिखे तो सरकार आधी निचली आबादी तक भी जीवन भत्ता कर सकती है।

इस तरह प्रतिदिन इन चारों मुद्दों पर विस्तृत चर्चा तथा प्रश्नोत्तर होते रहे। प्रतिदिन आगे की योजना पर भी चर्चा होती रही। इक्कीस जून को इस विषय पर व्यापक चर्चा हुई। स्पष्ट था कि हमारे आंदोलन की प्रमुख तीन मांगें तो संविधान संसोधन से जुडी होने से सरकार के बस की नहीं। चौंथी मांग भी साधारण मांग नहीं है जिसे कोई

राजनैतिक व्यवस्था आसानी से मान ले। वस्तुतः ये सभी मांगें सत्ता से संबंधित न होकर व्यवस्था से संबंधित हैं जिसका अर्थ होगा कि संसदीय लोकतंत्र को सहभागी लोकतंत्र की दिशा में झुकना होगा। सुझाव आये कि आंदोलन को गति देने के पूर्व राष्ट्रव्यापी जनमत जागरण तथा न्यूनतम ब्लॉक स्तर तक संगठन बनें। इस हेतु राष्ट्र स्तरीय यात्रा की जाये। यात्रा का पहला चरण वाराणसी से प्रारंभ होकर रामानुजगंज में समाप्त होगा। पहला चरण दो माह का होगा जो सात अक्टूबर 2014 से सात दिसम्बर 2014 तक का होगा। पहले चरण में वाराणसी से दक्षिण उत्तर प्रदेश होते हुए दिल्ली, हरियाणा, पंज़ाब, उत्तरांचल, हिमांचल, कश्मीर, उत्तरी उत्तर प्रदेश होते हुए गोरखपुर देवरिया से बिहार, झारखंड होकर रामानुजगंज पहुंचेंगे। यह पूरी यात्रा बोलेरो वाहन से होगी जिसमें ड्राईवर सहित कम से कम चार साथी तथा अधिकतम छः लोग रहेंगें। यात्रा के दूसरे क्रम में शेष भारत की यात्रा करेगे, जिसका कार्यक्रम नवंबर माह में घोषित करेंगे। पूरी यात्रा का समापन सात मार्च को वृंदावन में एक सम्मेलन के रूप में होने की उम्मीद है। इस सम्मेलन में हीं आगे की योजना बनेगी।

चर्चा में स्पष्ट हुआ कि व्यवस्था परिवर्तन कमेटी में वर्तमान में छः सदस्य हैं। 1. आचार्य पंकज ऋषिकेश 2. छबील सिंह सिसोदिया, पिलखुआं 3. ओमप्रकाश जी दुबे नोएडा 4. डॉ. ईश्वर दयाल नालंदा, 5. सिद्धार्थ शर्मा बैंग्लोर कर्नाटक 6. रमेश चौबे पटना। स्पष्ट हुआ कि छः लोग संयोजक मंडल के सदस्य होंगे। ज्ञानयज्ञ परिवार के श्री नरेंद्र सिंह जी इसके प्रवक्ता होंगे। यह भी तय हुआ कि व्यवस्थापक अपने नाम तथा बैनर तले कोई चुनाव न लडेगा न भाग लेगा। किंतु इससे जुडे व्यक्ति या संगठन स्वतंत्र रूप से चुनाव लड सकते हैं या भाग ले सकते हैं।

धरने का प्रारंभ धरती माता के प्रतीक स्वरूप ग्लोब के माल्यार्पण से हुआ। माल्यार्पण अमरनाथ भाई के द्वारा हुआ। समापन मुनी जी द्वारा प्रस्तुत स्वराज्य गीत से हुआ।

हम अपने साथियों से निवेदन करते हैं कि वे जहां– जहां भी ऐसी बैठकों का आयोजन रखना चाहें उन स्थानों के विषय में पत्र या फोन से शीघ्र सूचना दें दें जिसे अंतिम रूप दिया जा सके। बैठक का मुख्य उद्देश्य जनमत जागरण तथा प्रश्नोत्तर तो है हीं साथ हीं बैठक के माध्यम से विकासखंड तथा जिला स्तर के संयोजकों का भी चयन किया जायेगा। आम तौर पर बजरंग मुनी जी बैठक में नहीं रह सकेंगे किंतु अन्य लोग रहेंगे। बैठक के लिए बिदाई स्वरूप कोई स्थान कुछ दान या आवागमन व्यय के रूप में देना चाहेगा तो उसे रसीद देकर स्वीकार किया जायेगा किंतु किसी से कोई अपेक्षा नहीं की जायेगी। यदि बैठक के लिए कोई चंदा इकट्ठा होता है तो उसका भी कोई हिंसाब या बचा हुआ धन केंद्रीय कमेटी नहीं मांगेगी। प्रयास किया जायेगा कि अधिक से अधिक विकासखंडों में व्यवस्थापक के संयोजक बनें।

व्यवस्थापक के उद्देश्यों की चर्चा करते समय बताया गया कि वर्तमान लोकतंत्र को लोकनियुक्त तंत्र से बदलकर लोकनियंत्रित तंत्र करना इसका मुख्य उद्देश्य है। जिसका अर्थ होता है संसदीय लोकतंत्र को सहभागी लोकतंत्र की दिशा देना। प्रयत्न किया जायेगा कि वर्तमान में जो लोग अपने को सरकार कहते भी हैं और समझते भी हैं वे इस आंदोलन के कारण अपने को मैनेजर, प्रबंधक या व्यवस्थापक समझे भी और कहें भी। साथ हीं ठीक इसके विपरीत समाज के लोग स्वयं को मालिक या शासक समझना शुरू कर दें। यदि ऐसा हो जायेगा तो हम इसे अपनी सफलता मानेंगे। यदि हमारे प्रयत्नों के प्रभाव से सरकार कोई एक भी मांग मान लेती है तो शेष मांगों के लिए हम

जनमत जागरण तो जारी रखेगे किंतु आंदोलन नई सरकार बनते तक स्थगित कर देंगे। स्पष्ट किया जा चुका है कि व्यवस्थापक अपने बैनर तले या अपने नाम पर न कोई चुनाव लडेगा न किसी का समर्थन विरोध करेगा किंतु व्यवस्थापक के विभिन्न घटक अथवा सहभागी, सहयोगी या समर्थक व्यक्ति स्वतंत्र रूप से राजनीति में सक्रिय हो सकते हैं।

(व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी)

प्रधान कार्यालय- बनारस चौक

अम्बिकापुर (छत्तीसगढ़) पिनः 497001

प्रिय बंधु,

13 से 22 जून तक दिल्ली जन्तर मंतर पर धरना पूरा हुआ। संक्षिप्त जानकारी ज्ञानतत्व 295 के उत्तरार्ध में जायेगी। सर्व सम्मति से महसूस किया गया कि मोदी जी की सरकार समस्याओं के समाधान की दिशा में तो तेज चल सकती है किंतु लोक स्वराज्य की दिशा में आगे बढ़ने की कोई उम्मीद नहीं है। अन्ना जी के आंदोलन की असफलता तथा अरविंद केजरीवाल की टीम द्वारा सत्ता संघर्ष की दिशा पकडने के बाद अब हम सबकी मजबूरी है कि हम स्वयं आगे आकर लोक स्वराज्य की आवाज को मजबूत करें। धरना कार्यक्रम में महसूस हुआ कि हमें पहल करते हुए व्यवस्थापक अर्थात् व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी को एक राष्ट्रव्यापी संगठन का स्वरूप देना चाहिए जो चार मांगों को राष्ट्रव्यापी आवाज में बदल सकें।

1. **परिवार, गांव, जिले को संवैधानिक अधिकार**
2. **राईट टू रिकॉल**
3. **लोक संसद**
4. **जीवन भत्ता**

इस कार्य के लिए अपने छः राष्ट्रीय संयोजक मंडल के सदस्य तथा महासचिव सात अक्टूबर चौदह से सात दिसम्बर चौदह तक दो माह की राष्ट्रव्यापी यात्रा करेंगे। यात्रा का उद्देश्य चार मुद्दों पर चर्चा तथा विकास खंड स्तर तक के संयोजक तय करके एक संगठन खडा करने की है। कुछ जिला संयोजक तथा विकासखंड संयोजकों के नाम तय किये जा सकते हैं। यह संगठन पूरी तरह अराजनैतिक होगा किंतु हमारे घट्क दल अथवा पदाधिकारी अथवा कार्यकर्ता स्वतंत्र रूप से राजनीति कर सकते हैं। सारी चर्चा तो ज्ञानतत्व में जायेगी हीं। किंतु आप लगातार हमारे महत्वपूर्ण साथियों में रहे हैं। आप पत्र द्वारा या फोन से बताने की कृपा करें कि आपकी व्यवस्था के अंतर्गत कहां–कहां तथा कितनी बैठकें संभव हैं। आप सब की सूचना के बाद हीं यात्रा का मार्ग तथा तारीखें घोषित कर सकेंगे।

पंद्रह अगस्त से जिस यात्रा की योजना थी वह यात्रा अब सात अक्टूबर से नये स्वरूप में होगी। यात्रा उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, दिल्ली, राजस्थान, उत्तरांचल, हिमांचल, पंजाब, हरियाणा तक सीमित रखेंगे। इन प्रदेशों के निकट के क्षेत्रों तक अन्य प्रदेशों में भी जा सकते हैं। शेष भारत में दूसरे चरण में यात्रा करेंगे जिसकी जानकारी बाद में दी जायेगी। आप शीघ्र हीं सूचना देने की कृपा करें।

नरेंद्र सिंह

संयोजक. लोक संसद यात्रा